Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 18, Issue No. 7, December-2021, ISSN 2230-7540

पं. मदन मोहन मालवीय जी के दार्शनिक चिन्तन का अध्ययन

Vibha Mishra[1]* Dr. S. K. Mahto[2]

[1] Research Scholar, Raj Rishi Bhartrihari Matsya University, Alwar, Rajasthan

[2] Investigator Supervisor, Raj Rishi Bhartrihari Matsya University, Alwar, Rajasthan

सार – *मालवीय जी ने प्रयाग की धर्म ज्ञानोपदेश तथा विद्याधर्म प्रवर्द्धिनी पाठशालाओं में संस्कृत का अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् म्योर सेंट्रल कालेज से 1884 ई0 में कलकत्ता विश्वविद्यालय की बी0 ए0 की उपाधि ली। मालवीय जी सच्चे देशभक्त थे और हिन्दू धर्म में जो कुछ भी सर्वोच्च है उसके अनन्य प्रेमी थे (शान्तिस्वरूप भटनागर)। इस कथन से स्पष्ट है कि मालवीय जी हिन्दू धर्म को मानने वाले एक विचारक भी थे और उन्होंने जो भी कार्य धर्म के विषय में किया है वह उनके दार्शनिक विचारों का आधार लेकर हैं। वे शंकराचार्य, विवेकानन्द एवं आज के युग के डॉ. राधाकृष्णन जैसे दार्शनिक न थे परन्तु इतना अवश्य सत्य है कि वे भी दार्शनिक बातों पर अपना मत देते थे और उन्होंने ईश्वर, जगत, जीव एवं मनुष्य आदि प्रसंगों पर अपने विचार स्पष्ट रूप से प्रकट किये हैं। इस प्रकार के सभी सम्प्रदायों की अच्छी बातों में विश्वास करते थे। इसी दृष्टिकोण से हम उनके विचारों का अध्ययन करेंगे तथा उन्हें समझने का प्रयत्न करेंगे।*

कुंजीशब्द – *पं. मदन मोहन मालवीय, दार्शनिक चिन्तन।*

----------X----------

प्रस्तावना

पं. मदन मोहन मालवीय - भारत वर्ष में 19वीं शताब्दी इस देश के लिए वरदान बनकर आई जब देश ने अनेक ऐसे सपूत पैदा किए जिनके प्रयासों से ही सदियों से गुलामी का अभिशाप झेल रहा यह राष्ट्र पुनः आत्म-सम्मान के साथ जीने के सपने को साकार करता 15 अगस्त 1947 से स्वतंत्र राज्य का गौरव प्राप्त कर सका। सन् 1885 में आपकी जीवन-सरिता की पारिवारिक और शैक्षिक धारायें आपस में मिल जाती हैं।इसके बाद इस धारा में दशाधिक धारायें मिलाकर इसे वृहद् संगम का रूप प्रदान करती हैं। इस वृहद् संगम की कुछ धारायें इस प्रकार हैं, व्यावसायिक, राजनैतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक। आपकी व्यावसायिक धारा तीन चरणों में विभक्त हैं, शिक्षक, पत्रकार एवं अधिवक्ता। सन् 1885 में आपके व्यावसायिक जीवन के प्रथम चरण का शुभारम्भ होता है। प्रयाग-स्थित एक विद्यालय में अंग्रेजी भाषा के शिक्षक पद पर आपकी नियुक्ति। प्रारम्भ में वेतन 40 रुपया प्रतिमाह, जो बढ़ते-बढ़ते 75 रुपया हो जाता है।

मालवीय जी ने प्रयाग की धर्म ज्ञानोपदेश तथा विद्याधर्म प्रवर्द्धिनी पाठशालाओं में संस्कृत का अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् म्योर सेंट्रल कालेज से 1884 ई0 में कलकत्ता विश्वविद्यालय की बी0 ए0 की उपाधि ली। इस बीच अखाड़े में व्यायाम और सितार पर शास्त्रीय संगीत की शिक्षा वे बराबर देते रहे। उनका व्यायाम करने का नियम इतना अद्भुत था कि साठ वर्ष की अवस्था तक वे नियमित व्यायाम करते ही रहे। सात वर्ष के मदनमोहन को धर्मज्ञानोपदेश पाठशाला के देवकीनन्दन मालवीय माघ मेले में ले जाकर मूढ़े पर खड़ा करके व्याख्यान दिलवाते थे। शायद इसका ही परिणाम था कि कांग्रेस के द्वितीय अधिवेशन में अंग्रेजी के प्रथम भाषण से ही प्रतिनिधियों को मन्त्रमुग्ध कर देने वाले मृदुभाषी (सिलवर टंग्ड) मालवीयजी उस समय विद्यमान भारत देश के सर्वश्रेष्ठ हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी के व्याख्यान वाचस्पतियों में इतने अधिक प्रसिद्ध हुए। हिन्दू धर्मोपदेश, मन्त्रदीक्षा और सनातन धर्म प्रदीप ग्रथों में उनके धार्मिक विचार आज भी उपलब्ध हैं जो परतन्त्र भारत देश की विभिन्न समस्याओं पर बड़ी कौंसिल से लेकर असंख्य सभा सम्मेलनों में दिये गये हजारों व्याख्यानों के रूप में भावी पीढ़ियों के उपयोगार्थ प्रेरणा और ज्ञान के

www.ignited.in

अमित भण्डार हैं। उनके बड़ी कौंसिल में रौलट बिल के विरोध में निरन्तर साढ़े चार घण्टे और अपराध निर्मोचन (अंग्रेजी Indemnity) बिल पर पाँच घण्टे के भाषण निर्भयता और गम्भीरतापूर्ण दीर्घवक्तृता के लिये आज भी स्मरणीय हैं। उनके उद्घरणों में हृदय को स्पर्श करके रुला देने की क्षमता थी, परन्तु वे अविवेकपूर्ण कार्य के लिये श्रोताओं को कभी उकसाते नहीं थे।

महामना मानते थे कि 'जीवन का सर्वांगीण विकास शिक्षा का मूलमंत्र हो। शिक्षा की ऐसी व्यवस्था हो कि विद्यार्थी अपनी शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक शक्तियों का विकास कर आगे चलकर किसी व्यवसाय द्वारा सच्चाई और ईमानदारी से अपना जीवन निर्वाह कर सकें, कलापूर्ण सौंदर्यमय जीवन व्यतीत कर सकें, समाज में आदरणीय और विश्वासपात्र बन सकें तथा देशभक्ति से, जो मनुष्य को उच्च कोटि की सेवा को प्रेरित करती है, अपने जीवन को अलंकृत कर राष्ट्र की सेवा कर सकें।'

नव अन्वेषी पथ प्रदर्शक

मदन मोहन मालवीय, नेता, 23 अक्टूबर 1929 मालवीयजी ने 1980 में एक पत्रकार के रूप में अपना करियर शुरू किया और बाल कृष्ण भट्ट द्वारा स्थापित एक हिंदी समाचार पत्र 'प्रदीप' हिंदी में अपना पहला लेख लिखा। पत्रकारिता में उनकी सच्ची दिलचस्पी 1882 के कुंभ मेले में एक छोटी सी घटना से बढ़ी। प्रो आदित्य राम भट्टाचार्य और उनके भाई बेनी माधव, हिंदू भावनाओं के प्रति मेला आयोजकों के कुप्रबंधन और उदासीनता के खिलाफ आंदोलन कर रहे थे।उनका आंदोलन एक सही कारण के लिए था, लेकिन सरकार ने उनके आदेश पर न्यायपालिका की मदद से भाइयों को परेशान करने और उन्हें और दूसरों को सबक सिखाने के लिए दमनकारी कदम उठाए। दोनों भाइयों को अदालत में पेश किया गया और दुर्भावनापूर्ण कार्यवाही में उन्हें बहुत पैसा और अंतहीन मानसिक और शारीरिक तनाव का सामना करना पड़ा। सबसे बुरी बात यह थी कि कोई उनकी मदद नहीं कर सका इस घटना ने युवा मालवीय पर गहरी छाप छोड़ी, जिसके बारे में कहा जाता है कि उनका झुकाव सक्रिय पत्रकारिता की ओर था। उन्होंने महसूस किया कि सरकार के दमनकारी उपायों या न्यायपालिका के किसी भी पक्षपातपूर्ण निर्णय से लड़ने के लिए पत्रकारिता को एक शक्तिशाली हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

सत्यनिष्ठ न्यावेत्ता

मालवीय जी में तीन महान प्रतिभाएं थीं जो उन्हें महान विशिष्ट वकील बनाने के लिए गईं उनके संक्षिप्त, प्रभावी और वाक्पटु भाषण की पूरी तैयारी और अपने मामले को प्रेरक रूप से प्रस्तुत करने की कला। उन्होंने उदाहरणों का हवाला दिया और अपनी बात को इतने शांत और आश्वस्त तरीके से दबाया, कि विरोधी पक्ष के लिए उनके तर्कों का खंडन करना हमेशा मुश्किल था।राजा रामपाल सिंह, पडित सुन्दरलाल तथा पंडित अयोध्यानाथ की प्रेरणा से मालवीयजी वकालत की परीक्षा देने को बाध्य हुए। इसे बुरा पेशा मानते हुए भी वे मित्रों की बात टाल न सके। इसके लिए राजा रामपाल सिंह हिन्दुस्तान पत्र छोड़ने के बाद भी बराबर अपना शर्त के अनुसार 250) प्रतिमास मालवीयजी के पास भेजते रहे। 1981 ई० में मालवीयजी ने एल-एल०बी० की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली।

भारतीय राजनीति के स्तम्भ

उन्होंने अपने राजनीतिक जीवन की शुरुआत 1886 में कलकत्ता में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में व्यापक रूप से प्रशंसित भाषण के साथ की। मालवीय अपने समय के सबसे शक्तिशाली राजनीतिक नेताओं में से एक बन गए, चार मौकों पर कांग्रेस अध्यक्ष चुने जाने का प्रबंध किया।दिसंबर 1886 में, मालवीय ने दादाभाई नौरोजी की अध्यक्षता में कलकत्ता में दूसरे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस सत्र में भाग लिया, जहाँ उन्होंने परिषदों में प्रतिनिधित्व के मुद्दे पर बात की। उनके संबोधन ने न केवल दादाभाई बल्कि इलाहाबाद के निकट कलाकणकर एस्टेट के शासक राजा रामपाल सिंह को भी प्रभावित किया, जिन्होंने एक हिंदी साप्ताहिक हिंदुस्तान शुरू किया, लेकिन इसे दैनिक में बदलने के लिए एक उपयुक्त संपादक की तलाश में थे। इस प्रकार जुलाई 1887 में, उन्होंने अपनी स्कूल की नौकरी छोड़ दी और राष्ट्रवादी साप्ताहिक के संपादक के रूप में शामिल हो गए, वे यहां ढाई साल तक रहे और एलएलबी में शामिल होने के लिए इलाहाबाद चले गए, यहीं उन्हें द इंडियन के सह-संपादक की पेशकश की गई थी राय, एक अंग्रेजी दैनिक। कानून की डिग्री पूरी करने के बाद, उन्होंने 1991 में इलाहाबाद जिला न्यायालय में वकालत शुरू की और दिसंबर 1993 तक इलाहाबाद उच्च न्यायालय चले गए।

अध्ययन के उद्देश्य

1. पं. मदन मोहन मालवीय के दार्शनिक चिन्तन का अध्ययन व विश्लेषण करना।

क्रियाविधि

वर्तमान शोध कार्य पुस्तकीय संदर्भित दार्शनिक शोध विधि के अन्तर्गत आयेगा क्योंकि इसका दत्त अतीत में लिखे गये साहित्य तथा साधनों से लिया गया है, यह साहित्य दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है। प्राथमिक श्रेणी में वे साहित्य आते है जो मालवीय जी द्वारा स्वयं लिखे गये है या उनके भाषण के

www.ignited.in

संकलन मात्र है जिन्हें हम दत्त का प्राथमिक स्त्रोत कह सकते है। द्वितीय श्रेणी में वे साहित्य आयेगें जो उनके सहकर्मियों या उनके सम्बन्ध में विशेष रूचि रखने वालो द्वारा लिखे गये है। इस प्रकार के साहित्य को दत्त का द्वितीय स्त्रोत माना जा सकता है। शोध की दृष्टि से उपयुक्त दोनो स्त्रोतों की प्रमाणिकता अत्यधिक विश्वसनीयता है। मुख्य रूप से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित ग्रन्थों को शोध का आधार बनाया गया है जिनकी प्रमाणिकता के विषय में सन्देह नहीं किया जा सकता है।

पं. मदन मोहन मालवीय जी का दार्शनिक चिन्तन

पं. मदन मोहन मालवीय मालवा के श्री गौड़ ब्राह्मण थे जिनके पूर्वज प्रयाग (इलाहाबाद) में आकर बस गये थे। इलाहाबाद के अहियापुर मुहल्ला (अब इसे मालवीय नगर कहते हैं) में 25 दिसम्बर 1861 ई. को सांयकाल पं. मदन मोहन का जन्म हुआ था। पिता का नाम पं, ब्रजनाथ व्यास और माता का नाम श्रीमती मूना देवी था। इनके पितामह पं. प्रेमधर चतुर्वेदी भागवत रामयणी थे और बहुत प्रसिद्ध व्यक्ति थे। परिवार साधारण था, पिता कथा-वार्ता से जीवन निर्वाह करते थे, पर थे बड़े धर्मनिष्ठ, कट्टर मृदुभाषी। इनकी माता बड़े सरल, उदार एवं कोमल हृदय वाली थीं। जिससे सारे मुहल्ले में लोकप्रिय थीं। यही छाप पं. मदन मोहन मालवीय पर भी पड़ी।

मानवतावाद दर्शन

पं० मदन मोहन मालवीय मानवतावाद के पोषक थे। उनके अनुसार धार्मिक मानव की अवधारण वह है जिसके अन्दर आध्यात्मिकता का बोध है जिसके अन्दर ईश्वर का विश्वास है। ईश्वर पर उनकी अटूट निष्ठा थी। भागवत में प्रतिपादित अद्वैतवाद और ईश्वरवाद, भक्ति और निष्काम सेवा का ही सामंजस्य उन्हें स्वीकार था। ईश्वर पर उनकी अचल अगाध श्रद्धा थी। नियमित रूप से उसकी आराधना, तथा सदा उसका स्मरण वे मनुष्य का पुनीत कर्त्तव्य समझते थे। वे ईश्वर को ही सम्पूर्ण सृष्टि का "कर्ता, नियन्ता, तथा व्यवस्थापक, सम्पूर्ण विश्व का साक्षात्कार समझते थे। महामना के विचार में यह अद्वितीय शक्ति निःसन्देह अविनाशी, सर्वव्यापक, सत्यज्ञानस्वरूप एवं अनन्त है वह सभी वर्गों का मूल आधार तथा आराध्यदेव है। वे एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म के सिद्धान्त को स्वीकार करते है तथा ब्रह्मा, विष्णु, महेश को ब्रह्म की तीन संज्ञाएँ मानते थे और सभी देवी, देवताओं को उसकी विभूतियाँ समझते थे। मालवीय जी वेदव्यास के इस बात को स्वीकार करते थे कि ज्योतिरानि नान्यत्र समं तत्सर्वजन्तुषु अर्थात् वह ज्योति अपने अन्दर ही है अन्यत्र कहीं पर नहीं है, और सभी जीवधारियों में एक समान है। महामना यह चाहते थे कि हम यह समझ कर कि वह सभी में विद्यमान है, अपने अन्य जीवधारी भाइयों से अपना सच्चा सम्बन्ध स्थापित करें। मालवीय जी समत्व के सिद्धान्त को सनातन धर्म का ऐसा मूल मन्त्र स्वीकार कहते थे, जिसकी सिद्धी को ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग, मनोयोग, नीतिशास्त्र सभी ने निःश्रेयस अर्थात् आत्मोत्कर्ष और मोक्ष के लिए अत्यन्त आवश्यक बताया है।

आदर्शवाद दर्शन

मालवीय जी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को आदर्श मानव बनने के लिए सदैव प्रेरित करते रहते थे। वे विद्यार्थियों से कहा करते थे- यही से तुम आदर्श मानव बनकर निकलो और संसार को दिया दो कि हम काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्र है, हमारी माता चाहे - दीन हो या कैसी ही हो पर वह हमारी ही माता है। यह माता पूज्य है, हम माता से ऐसी शिक्षा लेवें, ऐसे उपदेश सने जिससे सुपुत्र होने का फल दिखा दें। कृष्ण और सुदामा साथ-साथ एक गुरुकुल में पढ़े थे। धनी और गरीब साथ-साथ रहते थे वैसे ही हम रहे। माता भेदभाव नहीं जानती। उसके लिए ऊँच-नीच दोनों पुत्र समान हैं बड़े पुत्र का कर्तव्य है कि छोटे पुत्र को योग्य बना ले। भूले - भटकों को सहारा दे। उसे सदाचारी और धार्मिक बनाकर योग्य भाई कर ले। उसे परम पुरुष का अनन्य भक्त और जननी का सच्चा लाल बना ले जिससे स्वच्छन्द पवित्र जीवन बनाकर वह लोक कल्याण कर सके मालवीय जी का विद्यार्थियों को उपदेश था - **सत्येन ब्रह्मचर्येण व्यायामेनायविद्ययया, देश भक्त्यात्मत्यागेन सम्मानर्हः सदाभव।** अर्थात् सत्य, ब्रह्मचर्य, व्यायाम, विद्या, देशभक्ति, पात्मत्याग द्वारा अपने समाज में सम्मान के योग्य बनो।

वे चाहते थे कि विद्यार्थी सदा सत्य का आचरण करें, ब्रह्मचर्य और व्यायाम द्वारा अपनी जीवन शक्ति को पुष्ट करें, नियमित रूप से विद्याध्ययन कर अपनी बौद्धिक शक्ति का विकास करें, अपने में अपने कटुम्ब तथा अपने राष्ट्र की सेवा करने की क्षमता पैदा करें, सदा शुद्धता से रहें और शील का पालन करें। वे अपने विद्यार्थियों को बताते थे कि शील और देश प्रेम से रहित ज्ञान निरर्थ है वे कहते थे- "शील प्रधान पुरुषे विनम्रता ही मनुष्य का प्रधान गुण है उनकी शिक्षा थी कि चरित्र ही मनुष्य को ऊँचा उठाता है, शील सम्पन्न विद्वान ही अपने जीवन का समुचित उत्कर्ष तथा समाज की ठोस सेवा कर सकता है वे अपने विद्यार्थियों से सदा कहा करते थे कि वाप लोग कोई ऐसा काम मत करना जिससे माता के ऑचल पर धब्बा लगे, बोर राष्ट्र के गौरव को क्षति पहुंचे। वे विद्यार्थियों से

कहते थे- हृदय को पवित्र बना लो, मन को निर्मल बना लो, संसार में जहाँ जाजोगे वही मान के अधिकारी होगे।

परम्परावादी महामना मालवीय जी

महामना जी को सनातन धर्म की व्यवस्था कट्टर-पंथी सनातन धर्मियों को मान्य नहीं थी, वे देश भक्ति से अधिक राजभक्ति को तथा लोकतन्त्र को प्राचीन भारतीय संस्कृति और सनातन धर्म की परम्पराओं के अनुरूप स्वीकार करते थे। भारत धर्म महामण्डल के महोपदेशक स्वामी दयानन्द ने अपनी पुस्तक 'धर्म विज्ञान' में शास्त्रों के आधार पर नूपतव की व्याख्या करते हुये आशा व्यक्त की कि स्वतन्त्रता प्राप्त होने के बाद आगे चलकर इस सम्पूर्ण देश के भीतर नृपतन स्थापित होगा। पं० लक्ष्मण शास्त्री ने तो 'वर्गाश्रम स्वराज्य संघ' स्थापित कर जिस की रीति - नीति तथा शाखों की प्रगतिशील व्याख्या का डटकर विरोध किया। उनका विश्वास था कि हमारे पास सब कुछ है, हमें दूसरों से कुछ भी नहीं लेना है। उनकी धारणा थी कि प्रचलित परम्पराओं में इधर-उधर करने की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्हें पुराने शास्त्रों और सिद्धान्तों को नयी व्याख्या भी सारहीन और धर्म के विरुद्ध दिखायी देती थी।

गीता दर्शन

सनातन धर्म के सिद्धान्तों में विश्वास करते हुए मालवीय जी ने ईश्वर तथा अन्य के सम्बन्ध में अपने विचार दिये हैं। वेद, स्मृति, उपनिषद्, भागवत आदि के आधार पर उन्होंने ईश्वर को एकमेवाद्वितीयम् तथा आत्मा वा इदमेक एकाग्र आसीत माना है जो हम सब का पिता, सृष्टी, निर्माता, सारी पृथ्वी और सारे लोक एवं विश्व में रहने वाला है। वह ईश्वर एक ही आत्मा, पुरण पुरुष, सत्य, स्वयं प्रकाश स्वरूप, अनन्त सबका आदि कारण, नित्य, अविनाशी, निरन्तर सुखी, माया में निर्लिप्त, अंखण्ड, अद्वितीय, उपाधि से रहित तथा अमर है। इस ईश्वर को मनुष्य आँखों से नहीं देख सकता, किन्तु हम में से हरेक मन को पवित्र कर विमल वृद्धि से ईश्वर को देख सकता है। ईश्वर को प्राप्त करने के लिये मालवीय जी देवी-देवता में भी विश्वास रखने के लिये जोर देते पाये जाते हैं।

आत्म ज्ञान एवं स्वतंत्रता

अद्वैत वेदान्त के अनुसार यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ब्रह्म द्वारा ब्रह्म से निर्मित है, वही इसका कर्ता है और इसका उत्पादन कारण है। अद्वैत वेदान्तियों का तर्क है कि ब्रह्म द्वारा निर्मित यह वस्तु जगत बनता बिगड़ता रहता है। इसलिए यह नित्य नहीं है और जो नित्य नहीं है वह सत्य नहीं है। मालवीय जी इस जगत को ईश्वर द्वारा निर्मित तो मानते थे परन्तु इसे असत्य नहीं मानते थे. ये इसे सत्य मानते थे, वास्तविक मानते थे। इनके अनुसार ईश्वर अद्वैत वेदान्त का ब्रह्म है, अनादि और अनन्त है, नित्य और सत्य है, सर्वज्ञ और सर्वव्यापक है और निराकार और सर्वशक्तिमान है परन्तु यह वस्तु जगत अद्वैत वेदान्त का माया जाल नहीं, ईश्वर की श्रेष्ठ रचना है, सत्य है और वास्तविक है।

मालवीय जी धर्म ग्रन्थों के ज्ञान और वस्तुजगत के ज्ञान, दोनों को आवश्यक मानते थे। इनकी दृष्टि से वस्तु जगत का ज्ञान तो हमारी केवल लौकिक उन्नति में सहायक होता है परन्तु धर्म ग्रंथों का ज्ञान हमारी लौकिक एवं पारलौकिक, दोनों प्रकार की उन्नति से सहायक होता है। इनका तो यहाँ तक मानना था कि बिना धर्म के ज्ञान और उसके पालन के तो हम लौकिक उन्नति भी नहीं कर सकते। मालवीय जी भारतीय मनोविज्ञान द्वारा प्रतिपादित इस तथ्य को स्वीकार करते थे कि किसी भी प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के लिए कर्मेन्द्रियों (आँख, कान, नाक, जिहा और त्वचा) और अन्तेन्द्रियों (मन, बुद्धि अहंकार और आत्मा) की आवश्यकता होती है। इनका विश्वास था कि बिना आत्मा के न तो कर्मेन्द्रियाँ क्रियाशील होती हैं, न ज्ञानेन्द्रियाँ और न मन, बुद्धि और अहंकार मालवीय जी मनुष्य को आत्माधारी मानते थे और इस दृष्टि से उनमें भेद नहीं करते थे पर साथ ही प्राचीन वर्ण व्यवस्था (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) में भी विश्वास रखते थे।

इनके अनुसार सभी वर्ण के व्यक्तियों को ईश्वर भक्ति और अपने-अपने वर्ण धर्म अर्थात् कर्त्तव्यों का ईमानदारी से पालन करना चाहिए। इनका विश्वास था कि इसी से मनुष्य अपनी लौकिक एवं पारलौकिक उन्नति कर सकता है। पारलौकिक उन्नति से मालवीय जी का तात्पर्य ईश्वर की प्राप्ति से है। और चूँकि ईश्वर सब प्राणियों में व्याप्त है इसलिए मनुष्य को सबसे पहले उसे अपने अन्दर ही देखना चाहिए और फिर अन्य सब प्राणियों के अन्दर देखना चाहिए। मालवीय जी के अनुसार प्राणीमात्र की सेवा करने से ही ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है। ये परसेवा को सबसे बड़ा मूल्य मानते थे। इनकी दृष्टि से मनुष्यों को एक-दूसरे की लौकिक एवं पारलौकिक उन्नति में सहायक होना चाहिए, सबमें ईश्वर के दर्शन करने चाहिए, सबसे प्रेम करना चाहिए और सबकी सेवा करनी चाहिए। परसेवा को ये सबसे उत्तम कर्म और सच्चा धर्म मानते थे।

निष्काम कर्म

मालवीय जी अपने कर्म के पक्के थे। उनका मानना था कि मानवता कर्त्तव्य है कर्म को करते हुए आगे बढना न कि फल की प्राप्ति के उद्देश्य से कर्म को करना। गीता से भी इन्सान को निष्काम कर्म करने की प्रेरणा मिलती है। कर्म करना मानव का

www.ignited.in

कर्त्तव्य है, कर्म का फल देना अन्य शक्ति के हाथ में है। इस प्रकार गीता दर्शन के अनुसार मानव को कर्म करने की प्रेरणा देना है। कर्त्तव्य के द्वारा ही मानव लौकिक एवं पारलौकिक, भौतिक एवं अभौतिक सुखो कों प्राप्त कर सकता है। कर्महीन व्यक्ति इस जगत में कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता है।

इस धरा पर बहुत से ईश्वर प्रदत्त चीजें हैं जो अनवरत् मानव या जीव कल्याण हेतु कार्य करता है। ईश्वर प्रदत्त सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, जल, हवा, प्रकाश आदि सतत् निष्काम कर्म करते हुए जीव कल्याण में लगा रहता है। मानव की ईश्वर निर्मित एवं चेतनाशील प्राणी है अत एवं उन्हें भी निष्काम कर्म करते रहना है। असहाय की सेवा करना ही सच्ची ईश्वरोपासना है। इस पृथ्वी से दस गुणा अधिक जल का परिमाण, जल से दस गुणा अधिक अग्नि का वेग, अग्नि से दस गुणा अधिक वायु की गति, वायु से दस गुणा अधिक आकाश का विस्तार, आकाश से दस गुणा अधिक अंहकार का प्रभाव, अंहकार से दस गुणा अधिक महत्व की गुणता और महत्व से दस गुणा अधिक यह मूल प्रकृति, जो ईश्वर के मात्र एक चरण में स्थित मानी जाती है। अस्तु कहा गया है कि निष्काम कर्म उपासना का सात्विक विद्यामार्ग ही भगवान की अनन्त महिमा को अनुभूत करने का समुचित मार्ग है।

सनातन धर्म दर्शन

भागवत, पुराणों, उपनिषदों, शैव एवं वैष्णव सम्प्रदायों की बातों में था। इस प्रकार वे अनन्य हिन्दू धर्म के भक्त और उपासक थे और उनका विश्वास वेदों, स्मृतियों, भागवत, पुराणों उपनिषदों शैव एवं वैष्णव सम्प्रदायों की बातों में था। इस प्रकार के सभी सम्प्रदायों की अच्छी बातों में विश्वास करते थे। इसी दृष्टिकोण से हम उनके विचारों का अध्ययन करेंगे तथा उन्हें समझने का प्रयत्न करेंगे।मालवीय जी धर्म के पक्के थे। उनका विश्वास सनातन धर्म में था। उन्होंने कहा है कि सनातन धर्म पृथ्वी पर सबसे पुराना और पुनीत धर्म हैं। यह वेद, स्मृति और पुराण से प्रतिपादित है। इसलिए उनका विश्वास सभी धर्मग्रन्थों एवं उनमें प्रतिपादित सिद्धान्तों में पाया जाता है। उनके प्रिय ग्रन्थ भगवद्गीता और गीता थे। उन्होंने कहा है कि मेरा विश्वास है कि संसार में भगवद्गीता के समान भक्ति और सात्विक कर्म की शिक्षा देने वाली कोई दूसरा पुस्तक नहीं है। इसलिये जितना भी इसका प्रचार हो उतना ही मनुष्य जाति का उपकार होगा। ठीक भी है क्योंकि उन्होंने अपने मृत्युपर्यन्त कर्म का बाना अपनाया था। उनका विश्वास था कि धर्म वह है जिसमें क्रियाशीलता की प्रशंसा आर्य लोग (श्रेष्ठ जन) करते हैं। सनातन धर्म क्या है और धर्म क्या है इस सम्बन्ध में मालवीय जी के विचार ये हैं। जिसमें आत्मा की उन्नति हो तथा निःश्रेयस की सिद्धि हो वह धर्म है अर्थात जिसके द्वारा व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति होती ह।

इसके आगे भी उन्होंने कहा है कि इस संसार की यात्रा में जो नियम आदि का पालन करना पड़ता है, जिससे इहलोक और परलोक में सुख मिलता है जिससे निश्चय ही यहाँ से मुक्ति मिलती है वह धर्म कहा जाता है। धर्म मनुष्यों द्वारा अपने में कुछ गुणों को धारण करने में होता है जिसका प्रभाव दूसरों पर पड़ता है। मनुष्यों में गुणों के होने से वह अन्य प्राणियों के साथ अहिंसा भाव रखता है, आदि। मालवीय जी ने सनातन धर्म के लिये लिखा है कि यह सब धर्म का मूल है जिसकी स्थापना वेद, स्मृति, पुराण, न्याय, मीमांसा आदि धर्म शास्त्रागों पर हुई है। इस सनातन धर्म की विशिष्टता है।

मालवीय जी के अनुसार सनातन धर्म का मूल है, "धर्म के बड़े-बड़े गुणों का समूह। वे अपने धर्म की व्याख्या देव भाषा से लेकर देश भाषा तक के समस्त सद्ग्रन्थों के आधार पर करते है जिनमें वेद, स्मृति, पुराण, आगम आदि सभी सम्मिलित है। अतरू वेद, वेदांग, उपनिषद, सूत्र, ब्राह्मण, अरण्यक, महाभारत, गीता, रामायण, पुराण, लौकिक संस्कृत, सन्त भक्तों की कृतियों आदि में जो धर्म के मूल सिद्धान्त वर्णित है, वे सभी सनातन है। सनातन वह है जो नित्य, स्थिर, सर्वव्यापक, चिरन्तर एवं अपरिवर्तनशील है जिस प्रकार आत्मा का किसी भी रूप में नाश सम्भव नही है, वह नित्य है, इस कारण सर्वगत, सर्वव्यापी, स्थाणु (स्थिर) अचल एवं सनातन है। समस्त भूतों का सनातन 'ब्रह्म' है 'वह' सृष्टि के आदि में था, अभी भी और आगे भी इसी तरह रहेगा, इसलिए वह निरन्तर रहेगा। सृष्टि के समस्त प्राणियों के नष्ट हो जाने पर भी जो नष्ट नहीं होता, वही अविनाशी, अनन्त, ब्रह्म उपर्युक्त वर्णित धर्मों का रक्षक सनातन परम पुरुष है। सृष्टि के समस्त जीव उस परमात्मा के ही सनातन अंश है। जो आत्माऔर ब्रह्म की नित्यता में विश्वास करता है, अखिल विश्व ब्रह्माण्ड को एक परमात्मा का प्रकट रूप, जल में बुलबुलों के रूप में, अर्थात् अंशावतार सदृश स्वीकार करता है, जो सृष्टि के बीज में था और सदा रहने वाला है, वहीं सनातन धर्म है।'

सनातन धर्म ज्ञान एवं सत्यरूपी ईश्वर पर विश्वास करता है - ज्ञान, विवेक, प्रज्ञा, प्रतिभा, बुद्धि की प्राप्ति ही ईश्वर की प्राप्ति है वह 'सर्व खतिवदं ब्रह्म', 'ओम इति एकाक्षर ब्रह्म', 'एकोऽहं बहुस्यां प्रयापेय' में विश्वास करता है, जो कि विश्व बन्धुत्व, विश्वमानव समुदाय एवं विश्व शान्ति का ठोस आधार है। रावलपिण्डी की सनातन धर्म-सभा में मालवीय जी ने कहा कि जिस बात की शिक्षा सनातन धर्म सर्वप्रथम देता है, 'ईश्वर का ज्ञान' वह घर-घर में व्याप्त है। यह हिन्दू धर्म का मूल सिद्धान्त है ,जब यह विश्वास हो जायेगा कि परमात्मा घर-घर व्यापी है, किसी को कोई परेशानी नहीं होनी चाहिए. उस समय न तो किसी से लड़ाई होगी न तो किसी से झगड़ा होग, उस समय

सर्वत्र सुख एवं शान्ति का राज्य होग। इसी में मनुष्य मात्र का कल्याण है।

केवल हिन्दू ही सनातन धर्म की महिमा को न समझे बल्कि मुसलमान, यहूदी, ईसाई आदि अन्य मतावलायी भी उसके महत्व को समझे कि वईश्वर है या नहीं? इस सन्दर्भ में महामना का कहना है कि मनुष्य के मुख से जो शब्द निकलता है, वह इस बात की घोषणा करता है कि ईश्वर है। लोग कहते है कि नाक सुंधती है, त्वचा स्पर्श करती है किन्तु कौन सूधंता है, कौन स्पर्श करता है, कौन देखता है, कौन सुना है? जब तक शरीर में प्राण है तभी तक इन्द्रिय भी काम करती है। प्राण निकल जाने के उपरान्त इन्द्रिय भी काम करना बन्द कर देती है। जिस मुख को देखने के लिए पुरुष, स्त्री, माता-पिता, भाई, बन्धु, सम्बन्धी व्याकुल रहते है। प्राण निकलते ही उसके मुख से लोग मुंह फेर लेते है मरते ही अपने प्रिय प्राणी उस मुख को ढंक देते है।

सनातन धर्म की गुण-कर्म पर आधारित चातुर्वर्ण-व्यवस्था, पुरुषार्थ चतुष्ट, चार आश्रम, तीन ऋण, पंच महायज्ञ; षोडश संस्कार; तीर्थ-व्रत त्योहार आदि है। यह सामाजिक व्यवस्था, शिष्टाचार, जीवनादर्श, लोकाचार, पारिवारिक एवं सामाजिक सांस्कृतिक मान्यताएं आदि आते है। वर्णाश्रम, पुरुषार्थ, चतुष्टय, पंच महायज्ञ एवं षोडश संस्कार हमारे जीवन के अभिन्न विधान है. इन सभी के बिना हम व्यवस्थित एवं समुन्नत नहीं हो सकते; आज उनके पालन के अभाव में हम अनेकों समस्याओं में उलझते आ रहे है जैसे भारतीय पारिवारिक व्यवस्था है।

निष्कर्ष

मालवीय जी सच्चे देशभक्त थे और हिन्दू धर्म में जो कुछ भी सर्वोच्च है उसके अनन्य प्रेमी थे (शान्तिस्वरूप भटनागर)। इस कथन से स्पष्ट है कि मालवीय जी हिन्दू धर्म को मानने वाले एवं एक विचारक भी थे और उन्होंने जो भी कार्य धर्म के विषय में किया है वह उनके दार्शनिक विचारों का आधार लेकर हैं। वे शंकराचार्य, विवेकानन्द एवं आज के युग के डॉ. राधाकृष्णन जैसे दार्शनिक न थे परन्तु इतना अवश्य सत्य है कि वे भी दार्शनिक बातों पर अपना मत देते थे और उन्होंने ईश्वर, जगत, जीव एवं मनुष्य आदि प्रसंगों पर अपने विचार स्पष्ट रूप से प्रकट किये हैं। इन्हें जानकर हम उनके दार्शनिक विचारों को समझ सकते हैं। इन विचारों से यह भी स्पष्ट है कि यह एक परम्परा के मानने वाले थे परन्तु किसी एक सम्प्रदाय के नहीं। कहने का तात्पर्य यह है कि वे न केवल वेदान्ती थे, न केवल अद्वैत या विशिष्टाद्वेत सिद्धान्त के मानने वाले थे। वे एक प्रकार से सभी सिद्धान्तों का जो उनकी अन्तरात्मा स्वीकार करती थी। उसे मानते थे। वे अनन्य हिन्दू धर्म के भक्त और उपासक थे और उनका विश्वास वेदों, स्मृतियों, भागवत, पुराणों, उपनिषदों, शैव एवं वैष्णव सम्प्रदायों की बातों में था। इस प्रकार वे अनन्य हिन्दू धर्म के भक्त और उपासक थे और उनका विश्वास वेदों, स्मृतियों, भागवत, पुराणों उपनिषदों शैव एवं वैष्णव सम्प्रदायों की बातों में था। इस प्रकार के सभी सम्प्रदायों की अच्छी बातों में विश्वास करते थे। इसी दृष्टिकोण से हम उनके विचारों का अध्ययन करेंगे तथा उन्हें समझने का प्रयत्न करेंगे।

सन्दर्भ

1. चौबे, डॉ.एस.पी.- भारत के कुछ शिक्षा दार्शनिक, रामनरायण लाल बेनी माधव प्रकाशन तथा पुस्तक विक्रेता, इलाहाबाद (1963)।
2. आशुतोष एवं डॉ. शिवमोहन पाण्डेय- राष्ट्रीय शिक्षा धारा के प्रवर्तक, अग्रवाल प्रेस, इलाहाबाद (1980)
3. पाण्डेय, डॉ. रामशकल, विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा (1995)।
4. जायसवाल, डॉ. सीताराम-विश्व के कुछ महान शिक्षक, प्रकाशन केन्द्र, लखनऊ (1983)।
5. गुप्त, एल.एन.- महान पाश्चात्य एवं भारतीय शिक्षाशास्त्री, कैलाश प्रकाशन मन्दिर, इलाहाबाद (1992)।
6. गुप्त, रामबाबू- पाश्चात्य एवं भारतीय शिक्षाशास्त्री, रतन प्रकाशन मन्दिर, आगरा (2000)।
7. दूबे, रमाकान्त- विश्व के कुछ महान शिक्षाशास्त्री, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ (1976)।
8. पाण्डेय, डॉ. राम शकल- शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा (1986)।
9. रस्क राबर्ट, आर.- महान शिक्षाशास्त्रियों के सिद्धान्त, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी (1969)।
10. तरुण, डॉ. हरिवंश- विश्व के महान् शिक्षाशास्त्री, प्रकाशन संस्थान, दयानन्द मार्ग दरियागंज, नई दिल्ली (2005)।

www.ignited.in

Corresponding Author

Vibha Mishra*

Research Scholar, Raj Rishi Bhartrihari Matsya University, Alwar, Rajasthan